Jr. Anth. Survey of India, 61 : 1 (261-281), 2012

परम्परागत औषधीय ज्ञानः झारखण्ड के गढ़वा जिला के खरवार जनजाति पर अध्ययन

सुदर्शन उरॉव*

सामान्य परिचय

किसी समुदाय, प्रजाति अथवा जाति के उद्भव और विकास का इतिहास उस प्रदेश/क्षेत्र विशेष की भौगोलिक पृष्ठभूमि से विशेष रूप से जुड़ा रहता है, जहॉ उनके पूर्वज आदि काल से रहते थे या किसी कारण विशेष रूप से विचारणीय है कि पुरातात्विक एवं भौगोलिक दृष्टि से झारखंड भारत के उन प्राचिनतम प्रदेशों में से एक है, जहॉ आदि मानव के प्रागैतिहासिक विकास यात्रा से लेकर आधुनिक मानव के अत्याधुनिक निवास की यात्रा कथा सुरक्षित है। झारखंड के छोटानागपुर के पठारी भाग में आदि मानव के विकास के कुछ पुरातात्विक प्रमाण मिले हैं। यहॉ विभिन्न युगों–पूर्व प्रस्तर युग से लेकर नव प्रस्तर युग तथा ताम्र युग के अवशेष सिंहभूम, रांची, हाजारीबाग, संथाल परगंना आदि स्थानों पर मिले हैं। जो 10,000 ई0 पू0 से लेकर 1000 ई0 पू0 तक के हैं। उत्तर वैदिक काल में 1000 ई0 पू0 से लेकर 600 ई0 पू0 जब ऐतिहासिक काल प्रारम्भ होता है, आर्यों का पर्दापण गांगेय घाटी में हुआ था।

आर्यो के आगमन के पूर्व इस प्रदेश में अनेकों जनजातियॉ आकर बसी थीं जिनका आगमन मुख्यतः सिंधु घाटी एवं अन्य क्षेत्रों से हुआ था। विभिन्न विद्वानों के मतानुसार दो मुख्य प्रजातियों के कबीले उत्तर पश्चिम से बिहार अब झारखंड प्रदेश में आये थे। इनमें ''प्रोटो–आस्ट्रो लॉयड'' या आस्ट्रिक प्रजाति के मुंडा, हो, भूमिज खड़िया आदि तथा द्रविड़ियन प्रजाति के उरॉव, **खरवार** आदि। इस क्षेत्र में ''असुर'' जनजाति के लोग पूर्व काल से रह रहे थे और वे ही ताम्र युग के बाद लौह–युग के प्रणेता थे। इस राज्य के पठारी भागों (छोटानागपुर और संथाल परगना), कैमूर की पहाड़ियों तथा गंगा, सोन, कोयल आदि नदियों की घाटी में विभिन्न जनजाति समूदाय के लोक काल क्रमानुसार आकर बसते गये जहां आर्यो अथवा अन्य जनजाति द्वारा विरोध या संर्घष की स्थिति उत्पन्न होने पर उनका पलायन एक दूसरे सुरक्षित स्थानों में होता रहा है। ऐतिहासिक तथ्यों और विभिन्न विद्वानों के मतानुसार कैमूर की पहाड़ी पर अवस्थित रोहतास में कभी उरॉव जनजाति बसी हुई थी। वहॉ कभी **खरवार** जनजाति का भी शासन था। परन्तु कालक्रमानुसार इन दोनों जनजातियों को अपनी सुरक्षा के लिए सोन नदी पार के छोटानागपुर के पठारी क्षेत्र के सघन वनों में आकर बसना पड़ा। झारखंड की 30 (वर्ष 2001) जनजातियों में आधिकांश जनजातियॉ छोटानागपुर और संथाल परगना में निवास करती है। सबसे पुरानी असुर जनजाति कभी खूॅटी क्षेत्र तथा अन्य भागों में निवास करती थी अब केवल नेतरहाट के पठार पर सिमट कर रह गयी है।

खरवार जन–जाति, जो द्रविड, मूल (प्रजाति) की है, का आगमन उत्तर प्रदेश से माना जाता है। विद्वानों के मतानुसार वे खैरागढ़ या खैरा झार नामक स्थान से आये थे। उनमें प्रचलित पररम्परा के अनुसार उनके पूर्वज पहले वृन्दावन (उत्तर) प्रदेश में कत्था बनाने का काम करते थे और वे वही से कैमूर पहाड़ पर आ कर बस गये थे।

श्री हेम्ब्रम ने अपनी पुस्तक ''आस्ट्रिक सिविलाइजेशन ऑफ इण्डिया'' में यह पस्तुत किया है कि भारत में 3500 बी.सी. में गैर–आर्य संस्कृति का स्वर्ण युग था। आर्य तो भारत में 2500 बी. सी. से आकर बसना शुरू किए थे। उन्होंने इसी संदर्भ में ''खेरवाली'' ''खेरवारी'' संस्कृति एवं जनजाति का भी प्रसंग प्रस्तुत किया। श्री हेम्ब्रम के अनुसार मेसोपोटामिंया में मिले शिलालेखों के अनुसार खरवार जनजाति अत्यन्त विकसित द्रविड़ प्रजाति थी।

डॉ. गुप्ता के अनुसार ''खरवार'' द्रविड़ मूल की जनजाति है। (सन्डर 1898) और वे खेरिझार नामक स्थान से आये इसलिए खेरवार कहलाये। सन्डर का प्रसंग देते हुए उन्होंने उनकी (खरवार की) छः उपजातियों का वर्णन किया है 1. सर्यवंशी, 2. दौलतबन्दी, 3. पटबन्दी, 4. खेरी, 5. भोगती या गंझू, 6. मंझिया शहाबाद में वे अपने को ''सूर्यवंशी राजपूत'' कहते है जनेऊ धारण करते है।

*Anthropological Survey of India, Ranchi

कर्नल डाल्टन ने एक लोककथा का प्रसंग देते हुए ''खरवार'' और ''संथाल'' की उत्पति एक जंगली हंस के दो अंडो से बताया है। दोनों अंडों से दो मानव संताने हुई। एक अहिरी पिपरी में बस गए जो संथाल कहलाये और जो हारादुती चले गये वे खरवार कहलाये।

सर एच. रिजले के अनुसार खरवार अपना मूल स्थान रोहतास बताते है। और सूर्यवंशी राजा हरिशचन्द्र के पुत्र रोहिताश्व से अपना संबंध स्थापित करते है। वे अपने को सूर्यवंशी राजपूत कहते है और जनेऊ धारण करते है।

श्री हवलदारी राम गुप्त ने अपनी पुस्तक पलामू का ऐतिहासिक अध्ययन में पौराणिक एवं ऐतिहासिक सन्दर्भो में खरवार जनजाति के उदभव स्थान को पौराणिक ''अजानगर'' बताया है जो अब अयोध्या के नाम से जाना जाता है। पुराण पुरूष वैवश्वत मनु के छठे पुत्र ''केरूस'' थे। उन्होंने भारत के पूर्वी राज्यों में अपना शासन कायम किया था खरवार जनजाति का विस्तार उन्हीं करूसों से होना बताया जाता है। खेर नामक स्थान पर ये करूस (करूस राजा के वंशज) बस गये थे। जिसके कारण कालान्तर में उनकी सन्ताने ''खेरवाल'' और आगे चलकर खरवार कहीं जाने लगी।

महाभारत के युद्ध में भी करूस जाति था प्रसंग आया है, जिन लोगों ने कौरवों का साथ दिया था संजय ने धृतराष्ट्र से अपनी ओर की सेनाओं के वर्णन में करूस का नाम लिया है। (सिन्हा 2000)

अध्ययन के दौरान साक्षात्कार के क्रम में खरवार लोगों से समूह साक्षात्कार से लोगों ने खैरीगढ़ से खरवाला वंश के ही खरवार हुए। आगे खरवार का विच्छेद कर खर से खरा, वार से लडाई, खर + वार = खरवार पड़ा पूर्वज लोग लडाई करते थे इसलिए खरवार पड़ा।

वर्तमान में खरवारों का वितरण पलामू प्रमण्डल के गढ़वा जिला, डलटनगंज, लातेहार एवं लोहरदगा, रांची, चतरा, जिलों के अलावे संथाल परगना के कुछ जिलों में भी पाए जाते हैं। झारखण्ड के बाहर के कुछ जिलों में तथा प0 बंगाल तथा उड़िसा में थोड़ी बहुत संख्या में ये मिलते हैं।

1941 की गणना में इनकी जनसंख्या 77589 थी किन्तु 1981 में इनकी संख्या 22758 दर्ज की गई थी 1991 में 173308 जनसंख्या रही तथा 2001 की गणना के अनुसार इनकी जनसंख्या 192024 व्यक्ति है। जिनमें से ग्रामीण जनसंख्या 188524 एवं नगरीय जनसंख्या 3500 है।

1991 जनगणना के अनुसार खरवार जनजाति का जिलावार जनसंख्या

जिला	**जनसंख्या**
रांची	579
लोहरदगा	7141
गुमला, सिमडेगा	6342
साहेबगंज एवं पाकुड़	14950
देवघर	654
दुमका, जामताड़ा	132
गोड्डा	179
पलामू, गढवा एवं लातेहार	131035
प0 सिहभूम, सारण्डा	549
पू0 सिहभूम	3572
हजारीबाग, चतरा एवं कोडरमा	2408
धनबाद, वर्तमान, बोकारो	1310
गिरिडीह वर्तमान, बोकारो	4457
कुल जनसंख्या	**173308**

स्त्रोत : लैण्ड एण्ड पिपुल ऑफ झारखण्ड पेज सं – 388.

अध्ययन क्षेत्र :

क्षेत्रीय अध्ययन हेतु झारखण्ड के गढ़वा जिला के रंका प्रखण्ड अन्तर्गत पड़ने वाले सेवाडीह, सींगा कला एवं उचरी ग्रामों का चयन किया क्योंकि इन ग्रामों में जड़ी–बुटी औषधीय जानकार के कुछ खरवार वैद्य है साथ ही दूसरे ग्राम गढ़वा प्रखण्ड अंतर्गत बानुटीकर (तुलबुला) में एक उरांव वैद्य से भी संपर्क किया जो इस क्षेत्र के लोगों को जड़ी–बुटियों द्वारा विभिन्न बीमारियों का इलाज करते हैं क्षेत्रीय दौरा दो चरणों में सम्पन्न किया। प्रथम जनवरी से मार्च 2010 लगभग दो महीना एवं द्वितीय चरण जनवरी से फरवरी 2011 एक महीना इस दौरान वैयक्तिक अध्ययन, साक्षात्कार, अवलोकन, समूह साक्षात्कार जो मानव वैज्ञानिक तकनीक है के द्वारा तथ्य संग्रह किया।

खरवार जनजाति का इतिहास

खरवार जनजाति का उल्लेख करते हुए पी. सी. टैलेन्टस लिखते हैं ''पलामू के खरवार'' अठाहरह हजारी भी कहे जाते है। उस सयम चेरो ''बारह हजारी कहे जाते थे। इसका संबंध पलामू पर भागवत राय (चेरो राजा) के हमले से जुड़ा हुआ हैं। जिनकी सेना में इतनी ही संख्या में खरवार और चेरो सैनिक थे वे द्रविड मूल के प्रतीत होते हैं। वे कभी बड़े–बड़े जागीर के मालिक थे। परन्तु बाद में अपनी शाहखर्ची से केवल खेतिहर भर रह गए। लापरवाही और आलसीपना के कारण वे खेती में भी पिछड़े हुए हैं।

खरवार जन–जाति को चेरो जनजाति से निकट बताते हुए श्री डाल्टन लिखते है कोल कहे जाने वाले खरवार बहुत काल से चेरो के साथ मिलजुलकर रह गए और उनकी प्रजा के रूप में रहते आये। दोनों के रीति–रिवाज एक दूसरे से मिलते जुलते हैं। वे अपना उद्‌भव ''सूर्य'' से मानते है। उनके पिता क्षत्रीय और माँ एक जनजाति (भरनी) महिला थी। उनका उद्‌भव तुरानियन प्रजाति से भी माना जाता है। कैप्टन बलंट 1794 में जब खरवार जनजाति से कैमूर पहाड़ पर मिले थे तो उन्हें आदिम अवस्था में पाया था।

डॉ. प्रसाद ने खरवार और खेरवार सम्बोधन को समानार्थक माना है और लिखा है खरवार समुदाय के लोग अधिकांशतः पलामू में रहते हैं और वे अपने को अट्ठारह हजारी कहते है। उनमें बहुत लोग अपने को ''राजपूत'' भी कहते है। दूसरी मान्यता के अनुसार संथाल जनजाति के कुछ धार्मिक पूरूत्थानवादी अपने को खरवार मानते हैं। परन्तु सभी सन्दर्भ में वे संथाल समुदाय के अभिन्न अंग है।

तीसरी मान्यता यह है कि खरवार शब्द का प्रयोग एक ऐसे वर्ग या समुदाय के लिए किया जाता था, जो सोन नदी के घाटी में रहते थे और खैर वृक्ष से कत्था बनाते थे। बाद में वे सोन घाटी को छोड़कर छोटे–छोटे दलों में बटकर विभिन्न भागों में चले गए और मुंण्डारी भाषा बोलने वाली जनजाति के समकालीन बन गए। श्री प्रसाद के अनुसार अपने पारम्पारिक इतिहास के आधार पर खरवार अपने को सूर्यवंशी हरिशचन्द्र के पुत्र रोहिताश्व के वंशज मानते है।

श्री रसेल ने खरवार को एक आदिम जनजाति बताते हुए क्रुक्स और कर्नल डाल्टन का उद्वरण प्रस्तुत करते हुए खैरावार, खरवार खैरा और खैरवा से सम्बोधित किया है। उनके अनुसार उस समय (1916 सेन्ट्रल प्राविन्सेज) सुरगुजा बिलासपुर, दमोह आदि में वे बसे हुए थे उनकी जन संख्या लगभग बीस हजार थी। कर्नल डाल्टन खरवार को चेरो के काफी सन्निकट मानते है। उनके अनुसार कभी गोरखपुर और शाहाबाद में काफी प्रभावशाली थे। परन्तु गोरखा लोगों के द्वारा भगाये जाने पर वे पलामू आ गये।

जातीय पहचान :

खरवार जनजाति ''द्रविड़'' प्रजाति या मूल की जनजाति की है। जैसा कि विद्वानों द्वारा प्रस्तुत विचारों के आधार से प्रकाश डाला गया है। काल क्रमानुसार खरवार अपने मूल वास स्थल से विस्थापित होकर विभिन्न स्थानों एवं विभिन्न जातियों/जनजातियों के बीच जाकर बसते गए इस कारण वे अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक भाषायी एकता खोते गए। कहीं उन्होंने सूर्यवंशी राजपूत के रूप में अपनी पहचान बनाने का प्रयास किया तो कहीं वे जनजाति के रूप में जाने गए। जो खरवार रोहतास गढ़ से पलामू आदि क्षेत्रों में जाकर बसे वे अपने को सूर्यवंशी मानते है परन्तु खरवरों का जो दल खैरागढ (मध्यप्रदेश) से पलामू, गुमला, रांची आदि क्षेत्रों में आकर बसा वे अपने को खरवार या देशवारी (मूल) खरवार जनजाति का मानते हैं। इस कारण अब इस क्षेत्र में सूर्यवंशी खरवार को बड़का खरवार और शेष को छोटका खरवार कहते हैं। दोनों के खान–पान शादी विवाह धार्मिक अनुष्ठान, पर्व त्योहार आदि में थोड़ा अन्तर पाया जाता है।

उनकी जातीय पहचान उनके गांवों, गोत्र प्रतीक सामाजिक एवं सांस्कृतिक पहचान, पूजा पाठ देवी देवता, पर्व त्योहार आदि के रूप में अक्षुण्य है। वे इस क्षेत्र में जनजातियों के बीच में बस गए है। अतः उन पर जनजातियों की संस्कृति तथा सामाजिक और धार्मिक परम्पराओं का प्रभाव भी काफी पड़ा है। वे अपनी सुरक्षा और कल्याण के लिए हिन्दू तथा अन्य स्थानीय जन– जातीय समुदाय की देवी एवं प्रेतों की भी पूजा करते हैं।

उनकी जातीय पहचान के रूप में उनमें प्रचलित 40 गोत्र है, जिसके प्रतिकों की पवित्रता बनाये रखकर खरवार वे उनकी पूजा करते है। इस कारण वे सगोत्री विवाह नहीं करते हैं। दहेज रहित विवाह उनमें आदिकाल से प्रचलित है, जो आज भी यथावत है। अन्य जनजातियों की तरह वधुमूल्य या मोनोंग की प्रथा इनमें नहीं है विवाह पूर्व यौन संबंध की वर्जना इनकी अपनी विशिष्टता है जन्म एवं मृत्यु के अवसर पर किए जाने वाले धार्मिक संस्कार खानपान, स्त्रियों में गोदना का प्रचलन, उनके उपनाम के साथ खरवार का जुड़ा रहना आदि ऐसे तत्व है जो उनकी जातीय पहचान बनाए हुए है। जनजातीय क्षेत्र में उनके रूप रंग शारीरिक बनावट आदि में बहुत कम परिवर्तन आया है। परन्तु वे आदिकालीन खरवारी या खेरवाली बोली बिल्कुल भूल चुके है। वे अब स्थानीय बोली ही बोलते है। गढ़वा क्षेत्र में भोजपुरी मिश्रित मगही बोलते है। वे अपने धर्म को हिन्दू धर्म मानते हैं। जनजातीय क्षेत्र में बसने वाले खरवार सरना धर्म को भी मानते हैं। और विभिन्न अवसरों पर वे जनजातीय देवी देवताओं को संतुष्ट करने के लिए बकरा और मुर्गा की बलि चढ़ाते हैं।

पारम्परिक औषधियाँ और वैद्य :

खरवार जनजाति के लोग पहाड़ों पर और जंगलों में रहते हैं, उन्हें उस क्षेत्र में मिलने वाली जड़ी–बूटी एवं औषधीय गुणों से युक्त पौधों की अधिक जानकारी रहती है। उनके समुदाय में जो ओझा गुणी होते है, वे रोग के निवारण के लिए मंत्र–तंत्र के साथ जड़ी–बुटी का भी प्रयोग करते हैं।

श्री महेशा सिहं खरवार वैद्य 75 वर्ष, सेवाडीह रंका, जड़ी–बुटी एवं झाड–फूंक मंत्र द्वारा लोगों का ईलाज करते हैं।
साँप के काटने पर जड़ी बुटियों का प्रयोग :–
(नाग, करैयत एवं बहीरा साँप)

1 करवन की जड़ी (करोंदा–कारिसा कोराण्डा) 25 पैसे वनज भर

2 वोन हरदी–कुरूकुमा एरोमेटिका 1 रूपया वजन भर।

3 गोलमिर्च–(ब्लैक पीईपर) 10 दानें।

उपयोग : उपरोक्त तीनों सामग्रियों को पीस कर एक बूंद भगवान के नाम पर जमीन पर गिरा देने के बाद मरीज को पिला देना है। तीन खुराक एक–एक घंटा के अंतराल पर सात दिन पिलाना एवं सात दिनों तक कटे हुए स्थान पर लेप लगाना है। नोट : बहीरा सांप के काटने पर लेप लगाना है, जिस जगह तक फूलता है उसी के चार इंच उपर दवा का लेप लगाना पड़ेगा। पानी पाव भर पिलाना है वैद्य जी का कहना है कि विश्वास होने पर दवा कराये नही ंतो जहाँ जाना हो जाय, चार आदमी के सामने दवा पिलाना चाहिए दूसरे व्यक्ति को परीक्षण के तौर पर दिलाना है कहीं जहर तो नहीं है, गवाह जरूरी है। नहीं तो मरीज के मरने पर पुलिस मुझे कहेगी जहर पिला दिया।
वर्जित – नमक नहीं खाना है।

मंत्र द्वरा विष उतारना

कंचन के बहुरिया से

तरकरिया नंगनियाँ ले

बढ़नियाँ वीखम (विष) बाहर पाँच बार।

पहला दवा पीसकर पाँच बार मंत्र के बाद एक बूँद गिरा देना है, उसके बाद मरीज को पिला देना है। दवा को एक ही आदमी पीसेगा जड़ को भी पीसकर पिलाना एवं लेप (छावेगा)।

लेप लगाने का दवा जड़वा (बहीरा साँप) के लिए अमरोड़ा की जड़ी, भैरो के बोकला (छाल) सेमर के जड, (एंटी सेफ्टीक) लहर नहीं देगा कुटकर 30–40 दानें गोलमिर्च (ब्लैक पीईपर) मिलाकर पीसकर लेप लगा देना है।

एक वैद्य ने कहा कि, निम्न उल्लेखित चीजों को साँप का काटा हुआ व्यक्ति यदि देख लिया तो उसे बचा पाना मुश्किल है वो हैः–

1. घर आंगन पर पुरानी सेम लतर (लरंग)।
2. रेड़ी एवं
3. घर के उपर छप्पर उल्टा किया हुआ को देख लेने पर।

खपरविच्छा मंत्रा (मंत्र)

धरती – धरती, घरती उपर टिला उठे
टिला उपर खपरविच्छा जन्में
खरपविच्छा के विष लागें
केकर कहल गुरू के कहल
गुरू महादेव ईश्वर गौरा पार्वती
नैना जोगी सीत गुरू के गोड़ लाग थी।

दवा : उजरैई के बोकला (छिलका) को छिल कर उसे पीसकर कम दर्द हो तो आठ आन्ना वनज भर के बराबर भाग को खपरविच्छा, टेटंगा (गिरगिट), मकरा (मक्ड़ी), कनगोजर, छिपकली एवं मेंढ़क के काटने पर लगाया जाता है।

झाड़–फूँक (झरनी)

धरती में खपरविच्छा
जन्मा (जन्म) तोहार रे
दिलावाहा में लेले उपदेश
तुव्हू जे खपरविच्छा मनवा के काटे मुती के पिलाना तू।
सई जे मनवा हो मरी न गईल
तोर बीखा (विष) लागे आकाश दो बार
तोर बीखा झारू उतारूँ
तोर बीखा झारू उतारू गुरू।

मिर्गी बीमारी के लिए जड़ी–बुटियों का प्रयोग

1. चिरैया कान की जड़ी एक इंच
2. काला दुधलर की जडी एक इंच
3. ललका करजनी की जड़ी एक इंच

उपरोक्त तीनों को मिलाकर पीस कर एवं छानकर मरीज को पिलाना है। बैल के मरने पर कहीं जंगल–झाड़ पर पड़े हड्डी पर खुखडी (मशरूम) उगने पर उस मशरूम को लाकर घर में झोली पर रख देना है। उसके सब्जी बनाकर रोटी के साथ मिर्गी वाले व्यक्ति को बिना बताए खिला देना है।

दूसरा दवा चितौर की जड़ी को पीसकर कपड़ें में करके दोनों हाथ एवं दोनों पैर पर बाँधना है। हाथ में हथेली के उपर एवं कुहनी के उपर दोनों हाथ पर एवं पैर पर, पैर के उपर एवं घुटने के उपर दोनों पैर पर बांध देना है।

कुत्ता सियार, (लोमड़ी) के काटने पर

अट्ठारह एवं बीस नाखुन वाले कुत्ता के काटने पर विष लगना ही है। कुकुर काला जड़ को एक इंच पीसकर भेड़ी (भेड़) वाले कम्बल के रूआ (रूई) को मैस लेना है एवं जड़ को महीन पीसकर गुड के अंदर छुपा देना है। पाँच गोली मंगल एवं रविवार को खिला देना है।

यदि कुत्ता जनवरी –फरवरी में काटा है तो जून – जुलाई वर्षा के समय असर करता है। असर करने से पहले दवा खिलाना जरूरी है काटने का भी ग्रह होता है। वैद्य जी ने कहा कि दवा का दाम लेते है, झाड़ने का नहीं। कुछ गांवों के लोगों को दवा दिया हूँ जैसे छोटकी रंका, हुड़दाग, बीरबाँध उचरी सेरका आदि जगहों मे जाकर कुत्ता काटने वालों को झाड़–फूँक एवं दवा दिए।

झाड़ने की विधि : मडुआ का आटा नहीं मिलने पर टिला के मिट्टी पांच गोली, पाँच बार झाड़ना है जहाँ काटा है। गाय बैल के उपर से हुआ देना है पूँछ एवं चारों पैर पर पाँच बार चढ़ाना एवं पाँच बार उतारना है। गाय–बैल को पीलू (कीड़े) होने पर कुकुर काला को ढ़ाई पत्ता डंठल के साथ घास के साथ ध्यान रहे पत्ते में छेद न हो खिला देना चाहिए।

बिच्छु के काटने पर

जड़ी–कुकुर काला (चिरचिटी) ये तीन प्रकार के होते है लाल, काला, एवं सफेद डाली सहित जड़ के तरफ से मरीज को सीधा दिखाना है एवं मरीज को इसके जड़ को खिलाना है यदि बाई हाथ में बिच्छु ने काटा है तो बाई तरफ मुँह में चबाना है यदि दाई तरफ में काटा है तो दाई तरफ चबाना है मुँह में जड़ को पीठ के पीछे ले जाना है एवं कम करते– करते मरीज को पूछना है, कि दर्द कितना कम हो रहा है।

श्री राम खेलावन सिंह खरवार वैद्य उम्र – 66 वर्ष ग्राम – उचरी, रंका

खपरबिच्छा, गिरगिट, गोजर (लाल) छिपकली घर रखवार के काटने पर ।

उपचार : खपरोवहड़ा के लतर को पीसकर पिलाना पड़ेगा, दो तीन खुराक अंदाज से एक ग्लास पानी के साथ तुरंत ईलाज जरूरी है। खपरबिच्छा गिरगिट के वर्ग के होते है इनका जीभ तीन भागों में विभक्त होता है। जिनका किस्मत खराब होता है उसे ही काटता है।

नोट : बैद्य जी ने कहा यदि खपरविच्छा काटने के बाद भागते हुए पेशाब करके उसे उलटकर यदि पेशाब को पी लिया तो लाख कोशिश के बाद भी मरीज को बचा पाना मुश्किल है।

फूलनी बीमारी पर (पूरा शरीर फूलने पर)

मोथा (साईप्रस रूड्रस) (गोल जड़ वाली काली रंग अंदर) से दूध निकलता है।

पीपर (पीपर लंगम)

मरीच (गोल मिर्च)

मिश्री

उपचार : उपरोक्त चारों बुटियों को सील पर पीसकर रोगी को खिलाना है यदि रोगी का रोग एक वर्ष से है तो उसे दवा एक ही बार देना है। यदि पांच वर्ष से रोग हुआ हैं तो उसे दवा पांच बार पीलाना है जब तक बीमारी ठीक नहीं हो जाता है।

परहेज दवा जब तक चलेगा नमक बिल्कुल वर्जित रहेगा।

मिर्गी बीमारी : मिर्गी एवं फरका दोनों एक ही बीमारी है एक में मरीज शांत हो जाता है। दूसरे में फड़फड़ाने लगता है दोनों की स्थिति में एक ही दवा का प्रयोग होता है।

उपचार : कुकुर की जड़ी भगजोगनी (जुगनू) के घर पराश (पलाश) के वृक्ष में गोल–गोल घर बनाता है। तीसरा गुड़ तीनों को पीसकर रोगी को खिलाना है।

परहेज : सूअर का शिकार (मांस) शराब भैसा का सिर (मांस) एवं पोठिया मछली।

दवा कुत्ता एवं सियार के काटने पर

डकडोल का बोकला (छिलका) 2 रू0 वजन भर

गूरजान नदी पर मिलता है चार अन्ना वजन तक पीसकर पिला देना है।

रानी (लाला रंग के कीड़े) ये प्रायः आषाढ़ महीने के प्रथम वर्षा होने पर इक्ट्ठा करके रखना पड़ता है बाकी समय ये मिलेगा नहीं।

गुड़।

उपचार : रानी को गुड़ के अंदर करके मरीज को एक ही दिन में पाँच बार देना है पन्द्रह महीना दिन होने पर तीन बार।

शारीरिक कमजोरी पर ताकत के लिए दवा

कपुरनी की जड़ी इसकी महक काफी तेज होती है।

बकरी का दुध

उपचार : रोगी को कपुरनी की जड़ पीसकर बकरी के दूध में मिश्री/चीनी मिलाकर सबेरे खाली पेट पर याद रहे जाड़े के दिनों में ही देने से कारगर सिद्ध होता है।

कामराज : एक अंगूली के बराबर सबेरे शीलोट में पीसकर पीने से तंदुरूस्ती आती हैं ।

गठिया, गिरेहवाह

गुरीच

मेद

हरदी (हल्दी)

उपचार : तीनों को पीसकर जाड़े के दिनों में एक दो महीना पीना है। उपरोक्त दवा का प्रयोग वैद्य जी ने खुद किया है।

गर्भवती औरत का बच्चा पैदा होने पर देरी होने में।

उपचार : चनकी रेड़ी के दाना को कपड़ा में करके गले में बाँध देना चाहिए बच्चा तुरन्त पैदा हो जाएगा, बच्चा पैदा होने पर उसे तुरन्त औरत के गले से उतार देना चाहिए।

धाध, सुजाग – में रंपावन की जड़ी कें पीसकर सवेरे खाली पेट में पिलाना हैं। जितनी पुरानी बीमारी हो 15 दिनों में असर दिखने लगेगा।

बवासीर : गजमोहनी पौधा चार–चार अंगूली काटकर उसे दिनभर पकाना है, आखरी अरख बचने के बाद उसे गोली बना लेना है सबेरे बारह बजे एवं शाम को खिलाने पर इस बीमारी में लाभ मिलता हैं। वर्जित : मिट्ठा, खट्टा, मिर्च एवं शराब के सेवन से बचना है।

श्री तेजू सिंह उम्र – 35 वर्ष

पुत्र श्री रामखेलावन सिंह वैद्य

सिंगाकाला, रंका।

मंत्र द्वारा विष निकालना : सुखी हल्दी को पीसकर कोई भी पत्ता पर रखकर मरीज को जिस जगह पर दर्द हो रहा हो उस स्थान पर 10 मिनट तक रखना है। तत्पश्चात मंत्रोचारण के बाद एक सफेद कपड़ा पर झाड़ दिए जाते है। इस विधि से यदि विष है तो जैसे मांस, हड्डी, कील इत्यादि के रूप में निकल जाता है और मरीज ठीक हो जाता है।

पशु बीमारी

डगहा (लंगडा) भरमटिया, खुरहा चपका, अढ़ाईयां जो ढाई दिनों तक रहता है। तिलैय बढ़वा–तिलैय पेड़ का छाल भथुवा, झोल (घर में जो होता है मकड़ जाल जैसा रसोई घर में) प्याज मिलाकर पिलाना है।

खुरहा में फलहद, एक साथ जुड़े बड़ (बरगद) एवं आँवला का वृक्ष के छाल एवं फलहद की डाली को पशु रखने के स्थान के नीचे रखते है जिसे पशु का पैर उससे स्पर्श होता रहे इससे खुरहा बीमारी ठीक हो जाता है।

बीमारी भूत–प्रेत द्वारा–कहीं से आए बीमार पड गए ओझा के पास गए मंत्र से झाड़–फूँक देने के बाद ठीक हो जाने पर विश्वास है कि इसी के कारण से बीमारी हुआ था बीमारी ठीक हो जाने पर ओझा बोलेगा एक साड़ी, एक धोती, एक मुर्गा, एक पाठी की मांग करते है घर पर पूजा करते है कोई ले जाते है।

हड्डी टूटने पर : पशु या मनुष्य का हड्डी टूट जाने पर उसे बाँस की पट्टी के साथ हड़जोडवा को पीसकर बाँध देने पर हड्डी जुड़ जाता है।

औरत को बच्चा जन्म के बाद दूध नही निकलने पर दवा :

उपचार : सतावर (अशपरागस रेसमोसस) की जड़ का रस पिलाने से महिला का दूध बढ़ने लगता है।

गर्भवती महिला की बीमारी के संबंध में धारणा :–

गर्भवती महिला की बीमारी पर सोच दोनों प्रकार का होता है। भूत अथवा बीमारी भी होगा ऐसी परिस्थिति में झाड़ फूँक एवं डॉक्टरी ईलाज दोनों चलता है देहात में अब जड़ी बुटी का अधिक जानकारी नही होने के कारण इसका प्रभाव नही पड़ता है। आज के खान–पान की वजह से भी बीमारियाँ होने लगी है।

बीमारियाँ

स्थायी रूप से मलेरिया होता है। पहले देहात में जड़ी बूटियों के द्वारा बीमारी ठीक होती थी परन्तु अब ठीक नही होता है। यह बीमारी नब्बे (90) प्रतिशत तक होती है पहले यह मौसमी बीमारी थी परन्तु अब ऐसा नही रह गया है। पाँच प्रतिशत, गैस पलायन से होती हैं।

श्री रामरेखा कुशवाहा – अरंगी, मेराल गढ़वा ने बुखार होने पर गूरीच को एक दो ईंच छिलका छोड़ाकर पांच गोलमिर्च के साथ पीसकर सुबह पांच दिन मरीज को पिलाने से ठीक हो जाता है।

–सिर दर्द में जटमौसी को पानी में भिंगाकर सर के उपर धुमाने से सिर दर्द ठीक हो जाता है

बीमारी का लक्षण

बुखार में सिर दर्द, शरीर में दर्द हो तो बुखार आने वाला है।

पेट दर्द : पेट दर्द में दर्द उत्पन्न होने से पत्ला दस्त होने से डायरिया होने वाला है।

सर्दी–खाँसी : बार–बार छींक आना।

सर्दी–खाँसी : बार–बार छींक आना।

गढ़वा प्रखंड के श्री बंशी उराँव वैद्य जी उम्र– 67, ग्राम–बानुटीकर (तुलबुला) में खरवार लोग विभिन्न विमारियों के ईलाज के लिए आते है, जो निम्नलिखित है :–

क्र0सं0	नाम	स्थान	बीमारी
1.	श्री रादेश्वरी सिंह	भंडरिया, वधवार	गैष्टिक
2.	श्री दीनबन्धु सिंह	सेमड़खाड	हाईड्रोशील
3.	श्री सुखेन्द्र कु0 सिंह	बरदरी	मिर्गी
4.	श्री चन्द्रश्वर सिंह	सेमड़खाड़	गिरेहबाद, सटका
5.	श्री रमन सिंह	बानुटीकर	बवासीर
6.	श्री रामदेवी सिहं	बैलाहाखड़ा	पुराना दामा
7.	श्री ठोमी सिंह	करसो	गेठिया
8.	श्री बलकु सिंह	तेरडीह	गैष्टिक, सटका
9.	श्री मिठू सिंह	बगवार	गेठिया, सटका
10.	श्री सुखदेव सिंह	गोदरमाना	गेठिया
11.	श्री रामदेवी सिंह	बैला खखड़ा	दामा
12.	श्री राजेन्द्र सिंह	कितासुती कला	गैष्टिक
13.	श्री तहसीलदार सिंह	बहाहारा	सटका, गैष्टिक
14.	श्री सागर सिंह	मगाही	बाँझपन
15.	श्री वासु सिंह	भैवरी	सटका
16.	श्री शिव प्र0 सिहं	ताबी	गेठिया, सटका
17.	श्री लखपति सिंह	वरवाडीह	फुदकी, गैष्टिक
18.	श्री योगेन्द्र सिंह	वारवाडीह	गेठिया

19.	श्री अजय सिंह	सरईडीह	पड़िता, टी. बी.
20.	श्री सुरेशा सिंह	भलवानी	सटका, गैष्टिक
21.	श्री चैतू सिंह	बानुटीकर	पोलियो
22.	श्री लाल मोहन सिंह	कसमार	सुजाक
23.	श्री अजय सिंह	बानुटीकर	सटका
24.	श्री जिमेदार सिंह	खुर्द सिरोई	लकवा
25.	श्री जगन्नाथ सिंह	कोरगाई	गेठिया, सटका

इन्होंने पूछने पर कुछ जड़ी बुटियों का नाम एवं प्रयोग के बारे में बताए जो निम्न है :–

	जड़ी बुटियाँ	**रोग निवारण**
1.	संजीवन, लाइकोपोडियम कलभेटम	गैस, दर्द
2.	कामराज (सीडा एक्यूटा)	धाध, कमजोरी
3.	तेजराज, न्यायनोसायक्ला ग्यालका	कमजोरी
4.	भोगराज (प्यूसीडेनम धाना)	मिर्गी, फरका
5.	भैचापा	गेठिया, सटका
6.	भुई जामुन	गेठिया, गिरेहबाद
7.	महादेव जठ	दर्द
8.	धनरास/वनरलौरी (कासिया फिर टुला)	बहीरा साँप के काटने पर पिलाना।
9.	भाभी रंग	गैस
10.	सनी पता	गैस
11.	ईन्द्र जौ	गैस
12.	घोड़वाछ (एकोरस केलेमस)	दर्द
13.	अर्जून छाल/कहवा (टरमिनेलिया अर्जूना)	हृदय रोग

बहुत ऐसा जड़ी पानी बरसने से पहले पता नहीं चलता है जैसे भुईजामुन, पताल कोहड़ा वैद्य जी का कहना है कि उपरोक्त सभी जड़ी बुटियों को खरीदना पड़ता है नाम से पता है इसके पेड़–पौधों को देखकर मैं भी नही पहचान पाऊँगा क्योंकि ये सभी सुखी रूप में खरीदता हूँ। मरीज को देखकर बीमारी के बारे में जानकारी लेने के बाद दवा जैसा जरूरत पड़ता है मिश्रित रूप में बनाकर देता हूँ।

उपरोक्त रोगों का इलाज इन्होंने 20–22 वर्षो से करते आ रहे है। वैद्य जी ने ये ज्ञान अपने दादा स्व0 चालहो भगत एवं एक मियां जी जिनका नाम करामत शेख था दोनों में दोस्ती थी ये दोनों से ही मैं सीखा दवा मंगाना पड़ता है कुछ गढ़वा में मिल जाता हैं। जिससे दवा बनाते है। मरीज को देखे परखे बिना दवा नहीं दे सकता हूँ।

इस प्रकार खरवार जन–जाति का जीवन पूर्व में काफी समय तक वनों एवं वनोत्पादित चीजों पर निर्भर करता था। कभी उनके पूर्वज इन्हीं वनों में पाये जाने वाले खैर वृक्ष से कत्था निकालकर और उसे बेच कर अपना भरण–पोषण करते थे। परन्तु अब वे उस पेशे से अलग हो चुके हैं

जिन क्षेत्रों में खरवार जनजाति के लोग रहते हैं उन क्षेत्रों में जंगल पहाड़ियाँ पर विभिन्न प्रकार की जड़ी बूटीं एवं औषधीय गुणों से युक्त पौधे पाये जाते हैं। जिनका सेवन वे स्वयं करते है तथा उन्हें बेचकर आर्थिक लाभ भी प्राप्त करते है। ऐसे पेड़ –पौधों का विवरण निम्न प्रकार है :

क्र.सं.	**जड़–बूटी/पौधों के नाम**	**रोग का नाम जिसमें प्रयोग होता हैं।**
1	बधरंडी	जले अंग पर लगाया जाता है। इसके खाने से दस्त होता है।
2.	बनाबार	पेचिस और डायरिया को ठीक करता है। इसका फल रक्त साफ करने के काम आता है।

3.	बरियारी	पेट दर्द की दवा।
4.	भोंसरी	सर्प दंश की दवा।
5.	भुई जामुन	गठिया, वात एवं सूजन ठीक करता है।
6.	बीधी मन्दार	प्रसव के बाद रक्त शुद्धि के लिए दिया जाता है।
7.	चैली	हैजा होने पर दिया जाता है।
8.	कठकरेजनी या जैठी मधु	खांसी में दिया जाता है।
9.	चितावर	बुखार, पेट दर्द, और हाइड्रोसील में दिया जाता है।
10.	छोटी दूधी	बुखार, चर्म रोग, पेशाब की बीमारी ठीक करता है।
11.	दातरोम सिंगी	हड्डी को जोड़ने के काम में आता है।
12.	दुधिया	देह दर्द, बुखार, और पेचिस में काम आता है।
13.	धोबाछ	बच्चों को बुखार में, देह दर्द, तथा सिर दर्द ठीक करने के लिए देते है।
14.	गुलेंची	प्रसूता के दूध बढ़ाने के लिए।
15.	गुर सुकरी या कुकुर बिचा	डायरिया और पेचिस की दवा।
16.	हड़जोड़वा	टूटी हड्डी जोड़ने के लिए।
17.	परही	बुखार, हैजा आदि होने पर काम में आता है। गर्भवती के खाने पर गर्भपात हो जाता है।
18.	सियार पोंछी	सेप्टिक घाव की दवा।
19.	रक्तसार	सूजन ठीक करता है।
20.	सतावर	गर्मी लगने से हुए बुखार की दवा।
21.	तिरियो	पेट दर्द, खूनी पेचिस, और पेशाब के खून रोकने की दवा।
22.	चिरैयता	बुखार एवं रक्त साफ करने की दवा।
23.	सनई	पेट साफ करने की दवा ।
24.	भेलवा	इसके फल के रस को सिर (ललाट) में लगाकर सिर दर्द दूर करते है। यह बहुत जलनशील होता है।
25.	सखुआ बीज	गर्भ निरोधक होता है।
26.	अर्जून	इसके छाल के रस का प्रयोग हृदय रोग में होता है।
27.	आँवला, हर्रे, बहेरा	इसका त्रिफला बनता है। जो पेट की बीमारी कब्ज आदि को दूर करता है।

वनों के विनाश से उनके पर्यावरण काफी प्रभावित हुआ है। इसका विपरीत प्रभाव उनके आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर पड़ा है।

कन्दमूल एवं फूल :

गढ़वा, पलामू, आदि पहाड़ी एवं वन क्षेत्र में अनेकों प्रकार के कन्दा और फल आदि पाये जाते हैं। जिन्हें अन्य जनजातियों के साथ–साथ खरवार भी वनों से लाकर खाने के लिए व्यवहार करते है। इनमें पौष्टिक तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते है जब अन्न की कमी

होती है, तो ये कन्दमूल और फलादि उनकी क्षुधा को शांत करने में सहायक होते है। विभिन्न प्रकार के कन्दमूल की विवरणी निम्न प्रकार है :–

1. **गेंठी :** यह एक प्रकार का कन्दा है जो जुलाई से अगस्त माह में होता है। यह 100 ग्राम से 250 ग्राम का होता है। यह काफी तीखा स्वाद का होता है और इसके छोट–छोटे टुकड़े कर रात भर पानी में रखकर दुसरे दिन उबाल कर खाते है।

2 **बड़ा कन्दा :** यह जमीन से लगभग 1 फीट नीचे रहता हैं। जो जुलाई से अक्टूबर माह में होता है। यह तीन से चार किलो तक वजन में होता हैं यह हल्का मीठा होता है। इसे उबालकर खाते है।

3. **बेरनई** : इसकी लता पेड पर फैल जाती है। यह प्रायः जुलाई–अक्टूबर में होती है। कन्दा वजन तीन से चार फीट नीचे जमीन में रहता है। यह तीन से चार केजी तक होता है।

4. **डुरा** : इसकी लताएँ काफी लम्बी होती है। यह अगस्त से दिसम्बर माह में होता है। इसका कन्द 15 कि. से 20 कि. का होता है। यह कम संख्या में मिलता है। इसे भी उबालकर नमक के साथ खाते है।

5. **लकमा** : यह जमीन में ज्यादा नीचे नही होता है। यह अगस्त से दिसम्बर माह में होता है। इसके खाने से मुहँ में खुजली होती हैं। इसे भी उबालकर खट्टा डालकर खाते है।

6. **डुरूपिठारू** : यह जमीन में 3 फीट नीचे मिलता हैं। यह अगस्त से दिसम्बर माह में होता है। इसका स्वाद में काफी मीठा होता है और लोग इसे कच्चा भी खाते है।

7. **बेरन्डी** : इसकी लताएँ जमीन पर फैलती है। और यह जमीन में बहुत नीचे रहता है इसे उबाल कर या आग में पकाकर खाते है। यह अगस्त से दिसम्बर माह में होता है।

8. **बयना** : यह भी खुजली पैदा करता है। इसे भी खटाई देकर पकाते है। यह अगस्त से दिसम्बर माह में होता है।

9. **कुकुच सांगा** : इसके लतर की पतियाँ लगभग 10 इंच चौड़ी होती है। यह अधिक नमी वाले जंगलों में मिलता है। इसे भी पकाकर खाते है। यह जुलाई से सितम्बर माह में होता है।

10. **कुलुसांगा** : इसकी लताएँ भी बड़ी पतियों वाली होती है। यह पेड़ पर दूर तक चढ़ जाता है। यह जुलाई से सितम्बर माह में होता है।

11. **खनियां** : इसे भी उबाल कर खाते है। यह जुलाई से सितम्बर माह में होता है।

12. **टुंगम कन्दा** : इसके लताएँ में कुछ काँटे भी रहते है। यह कुछ बड़ा और कड़ा होता है। इसे उबालकर भूनकर खाते है। यह अगस्त से दिसम्बर माह में होता है।

13 **भेड़वा कन्दा** : इसे पकाकर खाते है। यह पेट को ठीक रखता है और इस पौधे का रस पीने से पेटझरी ठीक होता है। यह अगस्त से दिसम्बर में होता है।

14. **बनकुन्दरी** : यह लतावाला कन्दा पहाड़ी घाटी में अधिक मिलता है। इसका फल, पता, और कन्दा, तीनों को पकाकर खाते है।

15. **पत्थर कोहड़ा** : इसकी लताएँ काफी मोटी और कड़ी होती है। इसे उबालकर खाते है और इसके पता को बुखार और गठिया बात होने पर पीस कर लगाते है। यह दिसम्बर से फरवरी माह में होता है।

    इन कन्दों में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, कैल्सियम, आयरन, विटामिन–सी, आदि पोषक तत्व पाये जाते है। इनमें यथेष्ठ मात्रा में कैलोरी (158–170ग्राम) भी मिलती है।, जैसा कि पूर्व में किए गए अनुसंधानों में पता चलता है।

वस्त्र

खरवार पुरूष सामान्यतः धोती, गंजी कुरता या कमीज और पगड़ी या चादर वस्त्र के रूप में धारण करते है वे सादे चादर की पगड़ी बांधते है। अपने कंधे पर एक गमछा या तौलिया अवश्य रखते है। अब पढ़े लिखे और आधुनिक युवक फुलपैंट, कमीज, बुशशर्ट, टी–शर्ट सफारी आदि भी पहनते है। छोटे लड़के हाफ पैंट, जंधिया, कच्छा, भगई आदि पहनते है। वे भी कमीज या गंजी पहनते हैं। जनजातीय एवं अन्य पिछड़े और गरीब क्षेत्रों में अधिकांश छोटे लड़के लडकियाँ नग्न या अर्द्ध नग्न देखी जाती है। कुछ लोग, जो राजनीति से जुड़े हुए है, धोती और कुर्ती या कमीज के साथ जवाहर, बंडी भी पहनते है।

महिलाएँ अधिकत्तर साड़ी झूला या ब्लाउज कंचुकी या चोली, साया या तहबन पहनती हैं। अब वे सूती और सिंथेटिक दोनों तरह के कपड़े पहनती है। विधवा होने पर खरवार महिलाएँ रंगीन वस्त्र न पहन कर सफेद वस्त्र ही पहनती है। कम आयु की लड़कियाँ पैंट, फ्राक सलवार, ओढ़नी आदि पहनती है। जो लडकिया विद्यालय में पढ़ती हैं। वे उस विद्यालय द्वारा प्रस्वीकृत गणवेश भी पहनती है। इनमें अभी पुरानी परम्परा के अनुसार महिलाएँ साड़ी का आंचल अपने सिर पर रखती है और बड़े बुढ़ों के सामने घूँघट काढ़ती है। जो परिवार गरीब और विपन्न है। वहाँ लोग कम कपड़े फटे पुराने कपड़ा पहन कर ही काम चलाते है। वैसे रहते है जनजातीय और ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश लोग हाटों से कपड़े खरीदते है।

खान–पान

जनजातीय बहुलक्षेत्र में रहने वाले खरवारों का भोजन वहाँ पैदा होने वाले अनाजों और वनों में मिलने वाले फल–फूल, कन्द मूल आदि पर निर्भर करता है। और उनका पूरा प्रभाव उनकी पोषण स्थिति पर पड़ता है। इस क्षेत्र में दिन रात के खाने का वे तीन भागों में बाँटते है।

1. **लुक्मा** : सुबह का नास्ता, जिसमें बासी भात, रोटी, या अन्य कोई चीज अल्पाहार के रूप में लेते है। कहीं कहीं लुक्मा के साथ चाय भी लेते है।
2. **कलवा या कलेवा** : दिन के भोजन को वे कलेवा कहते है। दिन में वे चावल या मकई का भात या घट्ठा कुरथी रहर या अन्य कोई दाल और मौसमी साग या सब्जी खाते है।
3. **बियारी** : रात के भोजन को वे बियारी कहते है। रात में अधिकांश लोग भात या घट्ठा और कई साग या सब्जी खाते हैं। अब लोग गेहूँ या मकई के आटा की रोटी भी खाते है। सर्वेक्षण के दौरान लोगों ने बताया कि पहले मकई का घट्ठा, मडुवा, गोंदली, कोदो आदि नौ महीना खाते थे। बाकी तीन महीना चावल, चकोड़ का साग, सरई को पकाकर पानी निकालकर बाद में खाया जाता था। गेठी (कन्द) आदि खाते थे। वर्तमान में चावल रोटी, मकई घट्ठा, सतू मकई, गेहूँ आटा रोटी, आदि।

इस क्षेत्र के खरवार आर्थिक रूप से कुछ अधिक विपन्न है। अतः खाने में अधिक पौष्टिक भोजन दूध, घी, दही, अंडा, मांस आदि का उपयोग कम ही कर पाते है।फिर भी वहाँ वनों में उपलब्ध पोषक तत्वों से युक्त साग सब्जी, फल–फूल, कन्द–मूल आदि का सेवन कर अपनी पोषण की स्थिति को बनाये रखते हैं। खानपान में शाकाहारी एवं मांसाहारी दोनों चलता है। शराब भी लेते है, सामाजिक तौर पर लेते है। परन्तु लोगों का कहना है कि पूरे समाज को शराब ही खत्म कर रहा है।

आवास–गृह

खरवार के अधिकांश घर मिट्टी की दीवार और खपरैल छप्पर के बने होते है। उनके घरों में आंगन और बाहर में बरामदा बनाने की परम्परा है। आंगन में कहीं–कहीं तुलसी का वृक्ष भी लगाते हैं। जो कोई मिलने आता है उसे बाहर के बरामदे में बैठाते हैं। कहीं–कहीं बाहर के बरामदे में घेर कर एक कमरा भी बना देते है। जहाँ अतिथि को ठहराते है। वे अपनी आवश्यकता एवं क्षमतानुसार तीन, चार या उससे अधिक कमरे का घर बनाते हैं। अतः कमरों की संख्या तदनुसार होती है। ताकि परिवार के सभी सदस्य उसमें रह सके। उनके घरों में सामान्यतः रसोई और भंण्डार घर (स्टोर) अलग बना रहता हैं कहीं –कहीं एक कमरे या भीतर के बरामदे में ढेकी और जाता या चक्की रहता है। जहाँ घर की महिलाएँ धान या चावल कूटने और आटा पीसने का काम करती हैं।

कहीं–कहीं छप्पर के नीचे एक और छत बनाकर खाद्यान्न आदि रखने के लिए दुछती बनाते है। उनके कमरों की लम्बाई चौड़ाई सामान्यतः 10 से 12 फीट लम्बा और 6 से 8 फीट चौड़ा होता है। रसोई घर काफी छोटा होता है। घरों में खिड़की या झरोखा वे नहीं बनाते हैं। उनका मवेशी घर मुख्य आवास गृह से बाहर होता है। कहीं–कहीं लोग सुरक्षा की दृष्टि से मवेशियों को घर के भीतर रखते है।

खरवार अपने घरों की लिपाई–पुताई दीपावली और रामनवमी के अवसर पर करते हैं। जनजातीय क्षेत्रों में घर की पुताई–उनकी स्त्रियाँ वहाँ मिलनेवाली सफेद या रंगीन (काला या लाल) मिट्टी से करती हैं। जिन लोगों का पक्का मकान है, वे चूना आदि से पोचाड़ा करवाते हैं। खरवार कच्चे घर की जमीन को गोबर से लिपते है। इनका घर साफ सुथरा रहता है।

जीवन चक्र

विभिन्न विद्वनों ने खरवार या खेरवाल के रूप में उस प्रजाति का वर्णन किया है जिससे संथाल जनजाति की उत्पति हुई है। आर. बी. रसेल ने कर्नल डाल्टन द्वारा प्रस्तुत एक संथाली लोक कथा का प्रसंग देते हुए खरवार जनजाति की उत्पति को एक मादा हंस के अंडे से माना है।

इस प्रकार खरवार जनजाति के आदि पुरूष का जन्म एक पक्षी के अंडे से माना गया है। और यह लोक विश्वास अन्य जनजातियों में भी प्रचलित है। सवर और हिल खड़िया की उत्पति मोर के अंडे से माना जाता है।

खरवार अपने को राजा हरिशचन्द्र के पुत्र रोहिताश्व की संतान भी मानते है। और इस कारण अपने को सूर्यवंशी राजपूत भी मानते है। उनमें यह भी लोक विश्वास है कि मानव जन्म केवल स्त्री, पुरूष के समागम से ही नहीं होता, वरन वह ईश्वर की कृपा या इच्छा पर निर्भर करता है वे पूर्नजन्म को पूर्व जन्मों का प्रतिफल भी मानते हैं।

जब कोई स्त्री गर्भधारण नहीं करती है तो वे उसका निम्नांकित कारण मानते है :

1. भगवान या काली माई उस पर नाराज है।
2. उस पर किसी प्रेत या चुड़ैल का प्रभाव है।
3. उसे डायन या ओझा बाँझ बना दिया है।
4. वह किसी दुराचरण के कारण माँ नही बन सकती है।

परन्तु अब पढ़ लिखकर जागरूक हो गए हैं वे इसे रोग या बीमारी के रूप में लेते है। और उसका इलाज कराते है। परन्तु जनजातीय क्षेत्र में अधिकांश उपर्युक्त बातों को ही बांझपन का कारण बताते है और उसके लिए ओझा गुनी की सहायता लेते है उनमें से बहुत कम यह जानते है कि बांझपन का कारण स्त्री या पुरूष अथवा दोनों में किसी शारीरिक दोष अथवा यौन संबंधी रोग या विकृति से होता है।

बांझपन खरवार समुदाय में भी हेय दृष्टि से देखा जाता है। परन्तु बोझ होने पर भी अपनी पत्नी का परित्याग नहीं करते वरन उसकी सहमति से सन्तान हेतु दूसरी शादी करते है परिवार में शिशु का जन्म लेना वे एक महत्पूर्ण घटना मानते हैं।

गर्भाधान एवं गर्भ की पहचान

खरवार जन–जाति में लडकियों की शादी सामान्यतः 18 से 20 वर्ष के बीच हो जाती है। शादी के बाद ससुराल चली जाती है समान्यतः शादी के एक वर्ष के भीतर वह गर्भवती हो जाती है। जब उसका मासिक धर्म होना बन्द हो जाता है। तब यह अनुमान लगाया जाता है कि वह गर्भवती है इस अवस्था को स्त्रियाँ दिन चढ़ना कहती है।

गर्भधारण का पता महिलाएँ कई प्रकार से लगाती है।

1. स्त्री का मासिक धर्म यदि एक–दो माह तक रूक जाता है तो समझा जाता है कि वह गर्भधारण कर चुकी है।
2. पेट के निचले भाग में उभार आदि शारीरिक लक्षणों को देख कर भी गर्भवती होने का अनुमान लगाया जाता है।
3. मुँह का स्वाद बदलने या बार–बार उल्टी होने पर भी यह अनुमान लगाया जाता है कि वह गर्भवती है।
4. गर्भवती स्त्रियाँ अक्सर खट्टा या मिट्टी के बर्तन का टुकड़ा खाना पसंद करती है।

गर्भ में पुत्र है या पुत्री इसकी पहचान चार–पाँच महीने का गर्भ होने के बाद बड़ी बूढ़ी महिलाएँ गर्भवती के शारीरिक लक्षणों को देखकर अनुमान के आधार पर करती है। यदि गर्भवती मोटी–ताजी या स्वस्थ रहती है तो समझा जाता है कि उसके गर्भ में कन्या है। इसके विपरीत यदि वह दुबली–पतली हो जाती है तो पुत्र का अनुमान लगाया जाता है। यदि गर्भवती को पेट अधिक बड़ा लगता है तब भी पुत्र होने का अनुमान लगाया जाता है।

गर्भस्त शिशु का खरवार भी अपने पूर्वजों के पुनर्जन्म के रूप में लेते है। गर्भवती हो जाने पर उसकी देखभाल विशेष रूप से की जाती हैं ताकि शिशु का जन्म बिना किसी विघ्न बाधा के सुरक्षित रूप से हो जाय। जनजातीय क्षेत्र में कहीं–कहीं और जनजातीय क्षेत्र के बाहर खरवार में गर्भवती को सम्मान देने के लिए नया वस्त्र देने का भी प्रचलन है।

गर्भवती के लिए विधि–निषेध :–

जनजातीय क्षेत्र में तथा अन्य क्षेत्रों में खरवार जनजाति में गर्भवती को कई निषेधों को मानना पड़ता है। ये निषेध उसके गर्भ की रक्षा तथा कष्टहीन प्रसव के लिए आवश्यक माने जाते है।

1. शमशान घाट या कब्रगाह में जाने की मनाही हैं।
2. अकेले नदी, तालाब, झरना, आदि के पास जाना माना है।
3. वह जंगल या निर्जन स्थान में नहीं जा सकती है।
4. श्राद्ध के भोज में वह नहीं भाग ले सकती है।

5. सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण देखना मना है।
6. गर्भवती को खान–पान में कई चीजें वर्जित है।
    1. रोवांदार पशु का मांस ।
    2. बासी भात, बासी रोटी, या बासी मकई का घट्टा।
    3. पशु–पक्षी का सिर, पैर या अंतड़ी का मांस खाना।
    4. शिकार किये गये पशु या पक्षी का मांस।
    5. बातारी चीजें –जैसे कोहड़ा, बैगन, सेम आदि।
    6. कुछ खास किस्म की मछली जैसे गोंजी, बामी।
    7. महुआ की शराब या चावल का हड़िया ।
    8. जोड़ा या जौआं फल या सब्जी।

गर्भवती की देख–भाल उसकी सास या माँ करती है या घर की अन्य वृद्ध महिलाएँ उसका ख्याल रख्ती है।

प्रसव के समय प्रसूता को एक अलग कमरे में रखा जाता है, जिसे सउरी या सौर गृह कहते है। कहीं–कहीं इसे परसौती घर भी कहा जाता है। इस कमरे में केवल स्त्रियाँ ही जाती हैं। पुरूषों का जाना वर्जित रहता है। वे केवल आपातकाल में ही जाते है। प्रसव के समय घर की बड़ी बूढ़ी और अनुभवी महिलाएँ प्रसूता को प्रसव कराने में मदद करती है। कहीं–कहीं गाँव की डगरिन या प्रशिक्षित दाई या नर्स प्रसव कराने के लिए बुलाई जाती हैं। अब लोग इस कार्य के लिस प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र रेफरल अस्पताल या अन्य अस्पताल की भी मदद लेते है।

प्रसव के बाद धार्मिक एवं अन्य कृत्यः ''नार कटाई'' शिशु के गर्भ से बाहर आते ही डगरिन या दाई बुलाकर शिशु के नार, नाल को उसके शरीर से अलग कर देती हैं। पहले यह कार्य किसी पुरानी छुरी या हंसिया से किया जाता था। जिसके कारण टेटनस हो जाने के कारण अनेक शिशुओं की मृत्यु हो जाती थी। परन्तु अब नाल काटने के लिए ब्लेड अथवा नई और साफ छुरी से किया जाता है। जहाँ प्रशिक्षित दाई या नर्स प्रसव कराती हैं वहाँ स्टेर्लाइज्ड ब्लेड से नाल काटती है। नालकाट कर नाभी में रह गए नाल के शेष भाग को किसी औषधीय पता का रस लगाकर सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है। दाई नारकाटाई के रूप में कुछ नगद राशि और कपड़ा या अनाज लेती है।

नाल–पुराइन को आँगन में या घर के निकट कहीं सुरक्षित स्थान में काफी नीचे गाड़ देते है ताकि उसे कुता या अन्य कोई जानवर निकाल कर खा न जाय । उनमें यह लोक विश्वास प्रचलित है कि यदि नाल पुराइन को कोई जानवर खा जायेगा तो जंगल में जाने पर उस शिशु को बाघ या अन्य जंगली जानवर द्वारा खा जाने की संभावना बनी रहेगी।

छूत एवं छूत की अवधि : नया जन्म होने पर प्रसव होने के दिन से छः दिन तक छूत माना जाता है। इस अवधि में सौर गृह में कोई नहीं जाता है। (बाहरी व्यक्ति) घर में कोई शुभ कार्य नहीं किया जाता है। कहीं कोई भोज खाने या अन्य अवसर पर बाहर नहीं जाता है। छठे दिन नाई आकर प्रसूता का नाखून काटती है और प्रसूता को स्नान कराया जाता है। इस अवसर पर नवजात शिशु को भी नहलाया जाता है। छठे दिन छट्ठी समारोह मनाया जाता है। और अपने संबंधियों को तथा सामर्थ्य रहने पर ग्रामवासियों को भी प्रीति भोज दिया जाता है। पलामू में लड़की होने पर पांच दिन में लड़का होने पर छः दिन में छट्ठी होता है।

नामकरण संस्कार

शिशु का नामकरण छट्ठी के दिन या उसके बाद ब्राह्मण या माता पिता द्वारा किया जाता है। जनजातीय क्षेत्र गढ़वा, पलामू आदि– में खरवार जनजातीय परम्परा के अनुसार ''सगून'' निकाल कर नामकरण करते है। इसके अनुसार घर का मुखिया थाली या लोटा में पानी भर कर अपने पूर्वजों (पितरों) का नाम लेकर चावल डालता है।

यदि किसी एक नाम लेने पर दो चावल एक साथ मिल जाते है तो शिशु का वही नाम रखा जाता है। इस क्षेत्र में खरवार शिशुओं का नाम उनके दादा–दादी के नाम पर रखा जाता है। परन्तु अब अधिकांश नाम ब्राह्मण द्वारा रखे जाते है। अथवा माता–पिता कोई आधुनिक प्रचलित नाम रख देते है। नामकरण के अवसर पर कोई समारोह नहीं होता है।

अन्न प्रासन संस्कार या मुँहजुट्ठी

खरवार जनजाति की महिलाएँ शिशु के जन्म के बाद से ही स्तनपान कराना शुरू कर देती है और एक–डेढ़ वर्ष तक शिशु को स्तनपान कराती हैं। शिशु जब 5 या 6 महीने का हो जाता है। तो ''मुँहजुट्ठी'' (अन्न प्रासन) का समारोह या रश्म की जाती है। इस अवसर पर दूध चावल और चीनी या गुड़ से बना खीर नयी कटोरी में लेकर शिशु के दादा, नाना, पिता या मामा उसे खिलाते है। इसके बाद ही शिशु को कोई ठोस, आहार दिया जाता है खरवार अपने बच्चें को मुंडा, संथाल आदि की तरह ''हड़िया'' (चावल की शराब) नहीं पिलाते है। खरवार के शिशु कम उम्र से ही ठोस आहार (दाल भात, खिचड़ी) आदि लेने लगते है। औसतन खरवार के बच्चें स्वस्थ पाये जाते है।

कर्ण छेदन : इस जनजाति में लड़कियों का कर्ण छेदन अथवा कान छेदना का कार्य कहीं–कहीं लड़की के एक वर्ष का होने पर और कहीं–'कहीं चार वर्ष का हो जाने पर कराया जाता है। लडकों का भी कर्ण छेदन कराया जाता हैं। धारणा है कि बिना कान छेद के छप्पर कैसे छावेगा।

विवाह :

भारतीय समाज में विवाह एक महत्वपूर्ण सामाजिक एवं धार्मिक कृत्य है, जो सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन को कतिपय सिद्धांतों एवं आदर्शो के आधार पर सुसंगठित और विनियमित करता है। विवाह की व्यवस्था द्वारा ही आज का समाज एवं परिवार सुसंगठित है। यह वह पवित्र बन्धन है जो दो व्यक्तियों में भी विवाह का विशेष महत्व है शादी पहले कम उम्र में होता था, अब 18 वर्ष के बाद लड़की, 20 वर्ष के बाद लड़का का विवाह होता है। प्रथम कहीं से किसी के द्वारा पता लग जाने पर लड़की वाले लड़का के यहाँ जाते थे परन्तु वर्तमान में लड़का वाले लड़की के यहाँ जाते है। बातचीत होता है। बात बनने पर ज्येष्ठ या वैशाख माह निर्धारित कर शादी की तिथि तय होती है। खरवार जो शिक्षित हो गए है। तिलक की मांग भी करने लगे हैं। शेष साधारण वर्गो के लोगों में प्रचलन नहीं है। शादी में मड़वा (मण्डप) आँगन में गाड़ा जाता हैं घर का देवी देवता का पूजा अपने द्वारा किया जाता हैं। शादी पण्डित एवं ठाकुर (नाई) द्वारा ही संपन्न कराये जाते है।

लगन जैसा हो पाँच दिन या दस दिन का लड़का एवं लड़की दोनों तरफ से इसके बाद हल्दी लगाना शुरू हो जाता है। लगन के हिसाब से पांचवें या दसवें दिन जो निश्चित हो बारात रात में प्रस्थान करता है शाम में शादी पंडित एवं नाई द्वारा संपन्न कराया जाता है। सुबह लड़की की विदाई होती है। निश्चित दिन तिथि को कन्या वर पक्ष के यहाँ आते है जिसे बहुराता (लियावन) कहते है। लड़की को वापस ले जाते है। बारात में केवल पुरूष ही जाते है। शादी के बाद एक से तीन वर्ष बाद बच्चा पैदा हो जाता है। एक दो बच्चें होने के बाद अपने माता–पिता से अलग हो जाते है।

गोत्र : काशी, शाम, हेम, कश्यप आदि गोत्र होते है, गोत्र में शादी नहीं होती है।

मृत्यु

व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर आस–पास के लोगों को एवं हित कुटुम्ब को जानकारी देते हैं लोग आते है इक्ट्ठा होते है। शव यात्रा की तैयारी होती है। शव को नदी किनारे ले जाकर अग्नि दी जाती है। दशवां दिन धोबी जाति के लोग आते हैं एवं पूरे गोतिया के लोगों के कपड़े को धोते है। वामन (पंडित) को खटिया, तोशक, रजाई, आवश्यक रुप से गाय, भैंस, बकरी, दिए जाते हैं। इन सब के अभाव में नगद रकम देकर खुश करके भेजना पड़ता है। शव यात्रा में केवल पुरूष ही शमिल होते है। महिलाएँ नहीं जाती है पंडित को हजार रूपये और कटहा वामन को पांच सौ रूपये देते हैं। दशवा के बाद ब्राह्मण भोज बारहवें दिन होता है।

अस्थि प्रवाह–अस्थि को बनारस ले जाकर गंगा में प्रवाहित करते हैं वहाँ भी पंडित जी को रकम देना पड़ता है जोर जबरजस्ती नहीं होता है अस्थी प्रवाह कर दशवां से पहले ही वापस होना पड़ता है दशवां दिन जो निज होते है बाल–दाढ़ी मुड़वा लेते है। पुरूष बच्चें से बुढ़े तक।

खान पान अग्नि संस्कार के बाद ब्राह्मण भोज तक हल्दी तेल, मांस, मछली, आदि वर्जित रहता है। बाल में तेल भी नही लगाते हैं।

यदि विवाहित मर जाते हैं। तो उपरोक्त नियमों का पालन किया जाता हैं। बच्चों की मृत्यु पर तीन दिन तक तिरात कहते है, नियम किए जाते है। इन्हें जलाते नहीं गाड़ते है दस से बारह वर्ष तक के लड़का लड़की की

मृत्यु पर सात दिनों तक नियम मानते है इन्हें भी गाड़ते है। यदि तीन से बारह वर्ष तक के बच्चें मरते है, और उसे जलाते है तो दशवां, बारवां एवं ब्राह्मण भोज करना जरूरी है। तब जाकर शुद्धिकरण होता है। गर्भवती के मरने पर जलाने एवं गाड़ने का भी प्रथा है। (फुलनी बीमारी पर मृत्यु) होने पर स्त्री व पुरूष हो गाड़ते (दफन) किया जाता है। साँप काटने पर मृत्यु होने पर इन्हें भी गाड़ा जाता है। तेरहवें दिन पानपगरी इसके बाद खान–पान सामन्य हो जाता है।

आर्थिक एवं पारिस्थितिकी

क) प्राकृतिक संसाधन : खरवार झारखण्ड के जिन क्षेत्रों में निवास करते है उनमें काफी विविधता है। उनके क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, आर्थिक संसाधन आदि अलग–अलग है। फलस्वरूप उनके जीवन यापन के आर्थिक संसाधन उनके क्षेत्र में उपलब्ध प्रकृति सम्पदा की सम्पन्नता और विपन्नता पर निर्भर करता है। खरवार मूलतः कृषि जीवन से जुड़े हुए है। वे पशुपालन में भी रूचि रखते है।

छोटानागपुर के पलामू गुमला, लोहरदगा आदि जनजातीय बहुल पहाड़ी क्षेत्रों में कुल खरवार जनजाति के जनसंख्या का 60 प्रतिशत लोग बसते है। यह क्षेत्र पश्चिम में मध्यप्रदेश अब छतीशगढ़ और उत्तर प्रदेश की सीमा से सटा हुआ है। इस क्षेत्र में तुलनात्मक दृष्टि से वन अधिक है। अतः इन क्षेत्रों में इमारती लकड़ी में साल सलई, आसन, बीजा सागवान, महुआ, जामुन आदि के पेड़ काफी है। फिर भी इन क्षेत्रों में भी वनों का विनाश काफी हुआ है। वन से भी खरवार अपना आर्थिक स्त्रोत प्राप्त करते हैं साल बीज, केंदू पता, आँवला, हर्रे, बहेरा, केंद, पियार, महुआ, जामुन, आम, कटहल आदि बहुतायत में इन जंगलों में मिलते हैं जिन्हें ऋतु के अनुसार वे जंगल से लाकर बेचते है। और अपने उपयोग में लाते है। इसके अलावा सतावर, चिरायता, सनई पती, ज्येष्ठ मधु, चितावर, घोरबाछ, परही, तिरियों आदि औषध गुण वाली जड़ी बुटी लाकर भी बेचते है। इस क्षेत्र में अनेकों प्रकार के खाने वाले कन्दा और गेठी मिलते है जिन्हें वे जंगल से लाकर खाते है।

इन वनों में कहीं– कहीं मोर, तीतर, हारियल, वनमुर्गी आदि पक्षी तथा बनेला सूअर साहिल, कोटरा, हिरण, खरगोश आदि भी मिलते है जिनका शिकार कभी–कभी कर लेते हैं।

वे जंगल में बहने वाली नदी या नाले में मछली भी मारने जाते है जिसके लिए छोटे जाल या बाँस की कुमनी का प्रयोग करते है।

जंगल से अनेक प्रकार के खाने–वाले साग और फूल भी प्राप्त करते है। जिनमें कचनार, जिहूल, कैमा, मौना, चकवड़, कोयनार, फुटकल, भुजा, टूरचा, सरवत आदि मुख्य है इस क्षेत्र में खरवार अब केला, अमरूद, पपीता आदि की वागवानी भी करने लगे है। इन पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ अच्छी मिट्टी है धान की खेती होती है टॉड जमीन में गोड़ा धान, गोंदली, मडुआ, कुरथी, सरसों, सुरगुजा, रहर, आदि लगाते हैं गेहूँ की खेती बहुत कम होती है। वे आलू प्याज, गोभी, बैगन, सेम आदि सब्जी का भी खेती करते है। जिससे उनकी आय में वृद्धि होती है। वे पलाश वृक्षों पर लाह की भी खेती करते हैं।

क्र0सं0	**बुनने की अवधि**	**फसल/अनाज का नाम**	**काटने की अवधि**
1.	जनू–जूलाई	धान, गोड़ा, धान छोटा	सितम्बर–अक्टूबर
2.	तदैव	गोंदली, मडुआ, जिनारी	
		मकई, खेड़ी, कौनी चीना	
		भदई और अगहनी	सितम्बर–दिसम्बर
3.	मई–जून	मकई, ज्वार, बाजरा	सितम्बर–दिसम्बर
4.	जून	घंघरा, मूँग, उड़द, कुरथी	अक्टूबर–दिसम्बर
ख) रब्बी			
1.	जून	रहर	फरवरी–मार्च
2.	सितम्बर	रेंडी	मार्च–अप्रैल
3.	तदैव	सुरगुजा	दिसम्बर
4.	नवम्बर	जौ, जई, खेसारी, गेहूँ	फरवरी–मार्च
5.	तदैव	तीसी	अप्रैल

यह फसल चक्र गढ़वा पलामू आदि जनजातीय एवं पहाड़ी क्षेत्रों में अनावृष्टि या सुखाड़ से प्रभावित होता है।

पशुधन

खरवार कृषि कार्य से जुड़े रहे है। अतः वे गाय बैल, बकरी, मुर्गी, पालते है । इनसे दूध एवं मांस प्राप्त होता है। बैलगाड़ी एवं कृषि कार्य हेतु बैलों से करते है। पहाड़ी क्षेत्रों में प्रायः कम दूध देने वाली गाय छोटी गायें पालते है जिसके रख रखाव में बहुत कम खर्च आता है। गायों को जंगल में चरने के लिए छोड़ देते है। ऐसी गाये औसतन आधा लीटर से डेढ़ लीटर तक दूध देती है। पहाड़ी क्षेत्र में भैंस पालन कम होता है।

धर्म

खरवार जन–जाति के धर्म एवं धार्मिक व्यवस्था के संबंध में रसेल डाल्टन, संडर, रिजले आदि ने उन्हें हिन्दू धर्मावलंबी माना है।

खरवार जनजाति के लोग, विशेषकर रोहतासगढ़ से संबंधित है अपने को रोहिताश के वंशज सूर्यवंशी राजपूत मानते है। साथ ही उनके मानव वैज्ञानिक और समाज शास्त्रीय इतिहास और उससे संबंधित विभिन्न विद्वानों के विचारो और तथ्यों से स्पष्ट होता है कि खरवार द्रविड मूल की जनजाति है। अतः जनजातीय धर्म एवं धार्मिक परम्पराओं का प्रमाण भी उनके धार्मिक अनुष्ठान में मिलता है।

जनजातीय क्षेत्र पलामू आदि : इस क्षेत्र के खरवार में भी कुछ अपने को सूर्यवंशी और कुछ देशवारी कहते है। इनकी धार्मिक अवधारणा कैमूर के खरवारों से थोड़ा भिन्न है। वे हिन्दू देवी देवता के साथ–साथ जनजातीय देवी, देवता, और प्रेतों को मानते है और विभिन्न अवसरों पर उनकी पूजा करते है। पलामू गजेटियर (1926) में खरवार के धार्मिक लोक विश्वास और देवी देवता के विषय में यह लिखा गया है कि खरवार अब हिन्दू की तरह ब्राह्मण से पूजा–पाठ करवाते है। परन्तु काफी संख्या में जनजातीय धर्म और संस्कृति को भी मानते है वे ओझा–डायन पर भी विश्वास करते है। गजेटियर में निम्नांकित देवी देवताओं का उल्लेख है :–

1. परमेश्वर – सबसे बड़ा देवता ।
2. चन्दर राय – कोरवा जनजाति का प्रेत।
3. छत्तर राय – मारा गया सैनिक का प्रेत।
4. गौरैया – खरवार प्रेत।
5. अंकार मल – राजपूत राजा का प्रेत।
6. मेहतर पलहट – भांट प्रेत
7. पुरविया – भुइयां का देवता।
8. चन्डी – देवी।
9. मुचुक रानी दुरजगिया देवता – यह खरवारों का विशिष्ट प्रेत है जिसका वास स्थल अपने ठप्पा पर है।

पर्व त्योहार

खरवार जनजाति, जनजातीय पर्वो के साथ–साथ अपने क्षेत्र में मनाये जाने वाली हिन्दू पर्वों को भी धूम धाम से मनाते है। इस कारण उनके पर्व त्योहार में विविधता पाई जाती हैं।

होली : नया वर्ष के उपलक्ष्य में मनाते है ।

रामनवमी

छठ – चैत्र महीने में ।

सरहुल पर्व – बैगा द्वारा पूजा।

सवनी – देवता, पितर, देवता को नया अन्न चढाने के बाद ग्रहण करते है ।

करमा – भादो में ।

जितिया – अष्टमी कृष्ण पक्ष अश्विन (पुकर)।

दूर्गापूजा – आश्विन कार्तिक महिना में मनाया जाता है।

दिपावली – कार्तिक महिना में मनाया जाता है।

भेलगड़ी,

छठ–कार्तिक पिछला पक्ष छः दिन जाने के बाद छठ (सुबह शाम पंडित द्वारा ही पूजा संपन्न होता है।)

देवठान – छठ के नौ दिन में उपवास दिन में शाम में व्यंजन बनाया जाता है। देवता को चढ़ाने के बाद पूरे परिवार के लोग खाते है। इस दिन भगिना को खिलाने का प्रथा है। मकर संक्रांति 14 जनवरी के दिन मनाई जाती है। गुड–चूड़ा, लाई, दही, शिव स्थल में पूजा पाठ करते है। सरस्वती पूजा पहले इसकी पूजा विद्यालय में ही होती थी। परन्तु अब गाँवों में भी स्थापित कर पूजा किए जा रहे है।

सरहुल पूजा में खस्सी, मुर्गी, घी, घूवन सिन्दूर, अरवा चावल, पानी से बलि वाले जीवों को बैगा द्वारा धोकर टिका लगाया जाता है। पूआ बनता है। सरहूल पूजा ग्रामीणों द्वारा चंदा एकत्रित करके किए जाते है पूरे गांव में मांस को प्रसाद के तौर पर बलि के बाद बाँट (वितरण) कर दिए जाते है, बलि देने वाले जीव बलि पूर्व चरने पर खुश होते है।

गाँव देवता, डीहवार मुख्य देवता, देवी, पुरविया, काली दूर्गा, सतबहनी कभी सात बहन सती हुई थी। सरना में वास होता है। दरहा, बधौत उपरोक्त सभी देवी–देवताओं के लिए बलि देने की प्रथा है।

सारांश : खरवार जनजाति के जो लोग पहाड़ों पर और जंगलों में रहते है, उन्हें उस क्षेत्र में मिलने वाली जड़ी–बुटियों से विभिन्न रोगों का इलाज करते है उनके समुदाय में जो ओझागुनी होते है। वे रोग के निवारण के लिए मंत्र–तंत्र के साथ–साथ जड़ी–बुटी का भी प्रयोग करते हैं। लेकिन धीरे–धीरे आधुनिकीकरण की चमक से लुप्त होती जा रही है। इस स्थानीय ज्ञान को संरक्षित करके–उसके अनुसंधान एवं प्रसार की आवश्यकता महसूस की जा रही है। झारखण्ड की कुल जनसंख्या का 26 प्रतिशत आदिवासियों से परिपूर्ण है जिसमें लगभग 30 (वर्ष 2001) आदिवासी जातियाँ है आज भी आदिवासियों का एक बड़ा समुदाय अपने जीवन यापन के लिए वनों पर आश्रित है। यहाँ अपना एक अलग सामाजिक सांस्कृतिक एवं पारंपरिक ढंग व रहन सहन है। जैवविविधता वाले क्षेत्र में संबंधित रहने की वजह से इन्हें औषधीय पौधों की उपयोगिता एवं संरक्षण के विषय में काफी जानकारी है। उन्होंने इस पारंपरिक ज्ञान को वर्षो के प्रेक्षण, प्रयास एवं निष्कर्ष से विकसित किया हैं कुछ घरेलू तकनीक जो स्थानीय क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित एवं बनाने में आसान है वास्तव में प्रभावशाली और आधुनिक दवाओं (एलोपैथी) की अपेक्षा काफी सस्ती है। आज यह देशज स्वास्थ्य तकनीक अपनी क्षमता एवं पहचान बढ़ाने में लगी है नयी पीढ़ी अपनी पारंपरिक जीवन शैली को छोड़कर आधुनिकीकरण की ओर बढ़ रही है जिसके कारण इस उपयोगी ज्ञान को जानने वालों की कमी होती जा रही है। इस विलुप्त होते हुए उपयोगी ज्ञान को मानव समाज के वंशजों के लिए संग्रहित करने हेतु इस पर शोध एवं प्रलेख तैयार करने की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

अध्ययन क्षेत्र के वैद्यों से मिलकर जड़ी– बुटियों के प्रयोग विधि आदि की जानकारी लिया उन्होंने अपने स्तर से जितना जानकारी था बताए बहुत सी जड़ी –बुटियों वर्षा के समय में जंगलों पहाड़ों पर उगते है। बहुतों को अधिक दिनों तक संरक्षित कर के घरों में नहीं रखा जा सकता है, ऐसा वैद्यों का कहना है। जंगलों में अधिकतर सांप तथा अन्य विषैले जीव–जन्तु के काटने पर विष का ही दवा को अधिकतर प्रयोग करते है क्योंकि इसके काटने की संभावना अधिक रहती है। लोग जंगल झाड़ में जाते है। और इन जीवों से प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से मिलना स्वाभाविक ही है जिसे कभी–कभी घटना घटित हो ही जाती है। अन्य बीमारियों के इलाज के लिए क्षेत्र के दूसरे समुदाय के वैद्य के पास इलाज के लिए खरवार समुदाय के लोग जाते है।

खरवार लोगों से समूह साक्षात्कार से पता चला कि आज के खान –पान की वजह से जड़ी–बुटी भी काम नहीं करता है इन लोगों को वनों में पाये जाने वाले औषधीय पौधों की जानकारी भी उतनी नहीं है।

बीमारियों के इलाज के बारे पूछने पर बाताए कि जड़ी–बुटी एवं एलोपैथी से भी इलाज कराते हैं।

क–11 अनुसूचित जनजाति विशेष से सम्बन्धित राज्य प्राथमिक जनगणना सार – 2001 खरवार (झारखण्ड)

क0सं0	मद	लिंग		योग	ग्रामीण		योग	नगरीय		योग
		पूरूष	स्त्री		पूरूष	स्त्री		पूरूष	स्त्री	
1	अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या (संस्थागत और बेघर जनसंख्या सहित)	98762	93262	192024	96784	91740	188524	1978	1522	3500
2	0–6 आयु समूह की अनुसूचित की जनसंख्या जनजातियों	22143	21943	44086	21838	21693	43531	305	250	555
3	साक्षर	33855	9937	43792	32442	9144	41586	1413	793	2206
4	कुल कर्मी	48672	33860	82532	48001	33754	81755	671	106	777
5	दीर्धकालिक कर्मी	35175	10595	45770	34593	10548	45141	582	47	629
	काश्तकार	23979	6696	30675	23967	6695	30662	12	1	13
	खेतीहर मजदूर	7720	3096	10816	7682	3092	10774	38	4	42
	पारिवारिक उद्योग कर्मी	252	145	397	247	142	389	5	3	8
	अन्य कर्मी	3224	658	3882	2697	619	3316	527	39	566
6	अल्पकालिक कर्मी	13497	23265	36762	13408	23206	36614	89	59	148
	काश्तकार	4219	8413	12632	4218	8407	12625	1	6	7
	खेतीहर मजदूर	8286	13642	21928	8250	13608	21858	36	34	70
	पारिवारिक उद्योग कर्मी	125	284	409	122	283	405	3	1	4
	अन्य कर्मी	867	926	1793	818	908	1726	49	18	67
7	गैर कर्मी	50090	59402	109492	48783	57986	106769	1307	1416	2723

स्त्रोतः भारतीय जनगणना 2001

पंचायत समिति की जनसंख्या, रंका प्रखण्ड गढ़वा जिला।

प्रखण्ड	पंचायत क्रम	ग्राम पंचायत	ग्राम पंचायत की जनसंख्या	अनुसूचित जनजाति
रंका	1.	सिरोई खूर्द	5744	2753
ʼʼ	2	कटरा	5116	3070
ʼʼ	3	दूधवल बेलवादामर	5409	2035
ʼʼ	4	चुतरू	5545	1729
ʼʼ	5	चुटिया	5266	1067
ʼʼ	6	विश्रामपुर	4835	2992
ʼʼ	7	सोनदाग	5335	1393
ʼʼ	8	रंका कला	5837	32
ʼʼ	9	कंचनपुर रूबदा	5518	581
ʼʼ	10	खरडीहा	4325	1250
ʼʼ	11	खपरो	4396	55
ʼʼ	12	मानपुर	4693	300
ʼʼ	13	तमगेकला	5841	3261
ʼʼ	14	बाहाहारा	4903	1485

स्त्रोत' सांख्यिकी विभाग समाहरणालय, गढ़वा, झारखण्ड।

झारखण्ड के उत्तरी–पश्चिम में अध्ययन क्षेत्र गढ़वा जिला अतंगर्त रंका प्रखण्ड(झारखण्ड)।

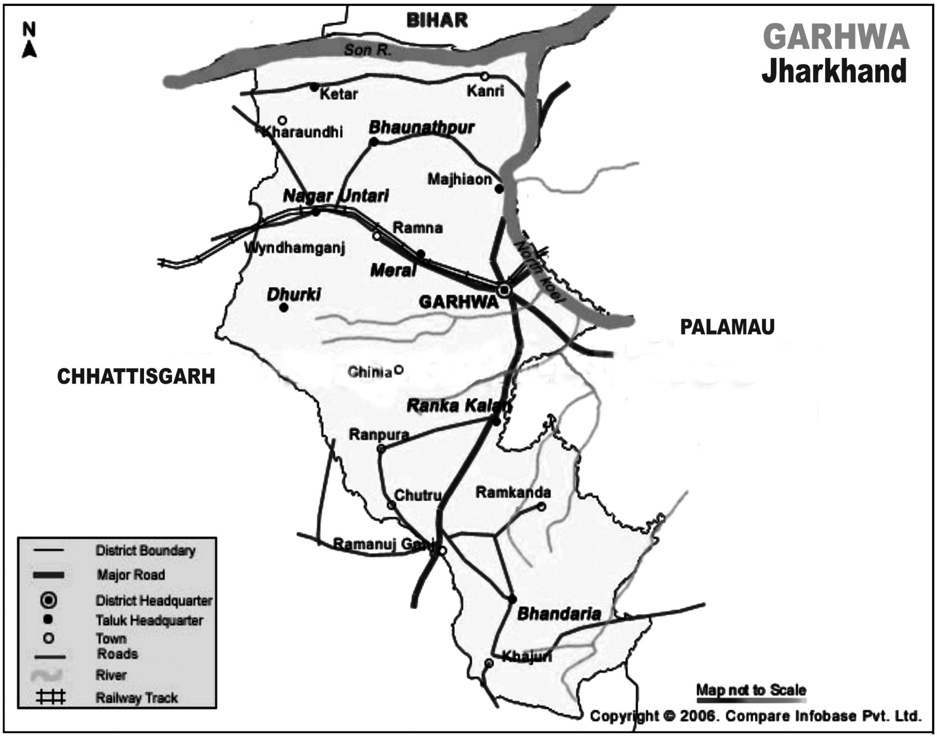

गढ़वा जिला के मध्य में स्थित अध्ययन क्षेत्र रंका प्रखण्ड (गढ़वा झारखण्ड)

संदर्भ – सूची

1. उराँव, पी. सी. – 2003 – लैण्ड एण्ड पिपुल ऑफ झारखण्ड, जे0 टी0 डब्लू0 आर्र0 आई, रांची।
2. कुमार, ऋषि – देहाती जड़ी बूटियाँ, क्रियेटिव पब्लिकेशन, 4422, नई दिल्ली।
3. गौंझू गिरिधारी राम – 2010 – श्रद्धा वनवासी वैद्य, वनवासी कल्याण केन्द्र, झारखण्ड।
4. टोप्पो, बि0 – 2006 – उरांव समाज में परम्परागत चिकित्सा पद्धति का मानोवैज्ञानिक अध्ययन – भारतीय मानव विज्ञान सर्वेक्षण, 27, जवाहरलाल नेहरू रोड, कोलकाता– 16।
5. पाण्डेय, गया – 2007 – भारतीय जनजातीय संस्कृति कंसैप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली – 110059।
6. राय, सरत चन्द्र – 1915 – ओराँव ऑफ छोटानागपुर, मैन इन इण्डिया ऑफिस 18 चर्च रोड रांची।
7. विक्रम, कीर्ति – 2002 – लधुवन पदार्थ एवं औषधीय जड़ी बुटियाँ, झा0 क0 शो0 सं0 मोराबादी, रांची
8. सिन्हा, आदित्य प्रसाद – 2000 – खरवार, झा0 ज0 क0 शो0 सं0, राँची।
9. सिन्हा, रेखा ... – झारखण्ड के रांची जिले के आदिवासियों द्वारा प्रयुक्त देशज चिकित्सा शैली, भारतीय वैज्ञानिक एवं औधोगिक अनुसंधान पत्रिका वर्ष 15, अंक 1 जून 2007 पृ0 74 – 79 प्रसार शिक्षा निदेशक बिरसा कृषि विश्वविद्यालय रांची – 6 (झारखण्ड)।
10. सिंह, के. एस. – 2008 – पिपुल ऑफ इण्डिया, बिहार झारखण्ड सहित, खण्ड सोलह भाग – 1 एन्थ्रोपोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया।
11. सिंह के. एस. 1994 – शिडूल्ड ट्राईब्स ऑफ इण्डिया,एन्थ्रोपोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया।
12. हेम्बरोम पी. पी. 1994 – आदिवासी औषध – पहाड़िया सेवा समिति पाकुड, बिहार।